Research Paper Literature

Gadhya Sahitya me Premchand ka Yogdan or unki Sampradayikta

गद्य साहित्य में प्रेमचन्द का योगदान और उनकी साम्प्रदायिकता

Dr. Sanjay Kumar

Vardha Education,Group Hall No.3,Red Cross Market, Gohana Road Jind,Haryana-126102.

KEYWORDS

प्रत्येक सच्चा साहित्यकार अपने युग और वातावरण से प्रभावित होता है। यह उसकी सजगता का प्रमाण और सफलता का कारण माना जाता है। इस प्रकार सच्चा साहित्यकार वही है, जिसकी कृतियों में उसका युग साकार हो उठा हो। इस दृष्टि से प्रेमचन्द एक सफलतम साहित्यकार माने जा सकते हैं। उपर्युक्त सिद्धान्त में अपनी आस्था व्यक्त करते हुए प्रेमचन्द जी ने लिखा है कि ''साहित्यकार बहुधा अपने देषकाल से प्रभावित होता है। जब कोई लहर देष में उठती है, तो साहित्यकार के लिए उससे अविचलित रहना असंभव हो जाता है। उसकी विषाल आत्मा अपने देष–बन्धुओं के कश्टों से विकल हो उठती है और इस तीव्र विफलता में वह रो उठता है, पर उसके कदम में भी व्यापकता होती है। वह स्वदेष का होकर भी सार्वभौमिक रहता है।''

प्रेमचन्द के बारे में जो बात सबसे पहले ध्यान में आती है, वह यही कि वे अपने समय के प्रति अत्याधिक जीवंत थे। अपने युग की हर समस्या, स्थिति और उसके मानसिक वेग को उन्होंने बड़ी ही संवेदना से झेला, उसकी आवष्यकताओं को पहचाना युग की मांग को महसूस किया और उसे अपनी रचनाओं में रूपान्तित किया। वस्तुतः उनकी साहित्यिक साधना इस बात की साक्षी है कि उन्होंने जिन्दगी की चुनौतियों को साहस के साथ स्वीकारा और समय के एक–एक तेवर को पहचानते हुए, अपनी रचनाओं में उन्हें इस तरह प्रस्तुत किया कि वे उस समय और उस जिन्दगी के प्रमाणिक दस्तावेजों के रूप में अपनी पहचान बना सकी। इसीलिये कहा गया है कि ''प्रथम विष्वयुद्ध से लेकर द्वितीय विष्वयुद्ध तक के काल के लिये उनका उपन्यास साहित्य भारतीय जीवन का सबसे बड़ा और सबसे प्रमाणिक कोश है।

साम्प्रदायिकता :
अनेकता में एकता भारतीय संस्कृति का मूल मन्त्र रहा है। यही कारण है कि यहां षताब्दियों से भिन्न–भिन्न सम्प्रदाय अपनी अलग पहचान बनाये रखकरण भी, राश्ट्र–निर्माण में अपना सहयोग देते रहे हैं। अपने–अपने धर्म का विरोध पालन करते हुए धर्म में कट्टर बने रहना और षान्तिमय साधनों द्वारा अपने–अपने धर्म का प्रचार करना साम्प्रदायिकता नहीं है, बल्कि दूसरों के धर्म के प्रति सहिश्णु बनकर उन पर अपना धर्म लादना साम्प्रदायिकता है।

प्रेमचन्द का दृश्टिकोण :
प्रेमचन्द जी सैद्धान्तिक रूप से ही नहीं, व्यावहारिक रूप से भी साम्प्रदायिक एकता के समर्थन थे। उनकी मित्र–मण्डली में हिन्दू और मुसलमान दोनों थे। उन्होंने उनके बीच रहकर गहराई से यह अनुभव किया था कि साम्प्रदायिकता झगडे कुछ स्वार्थी राजनीतिक नेताओं का धर्म के ठेकेदारा द्वारा उकसाए जाते हैं और वे उन्हीं लोगों तक सीमित है। हां वे उस रोग को चारों और फैलाकर वातावरण को दूशित करने का प्रयास अवष्य करते हैं, किन्तु फिर भी साधारण हिन्दुओं या मुसलमानों में यह रोग अभी अपना स्थान नहीं बना पाया है।

प्रेमचन्द जी सच्चे मानवतावादी कलाकार थे। उनमें साम्प्रदायिकता, मजहबीपन और धर्मलिप्तता नामक तो कोई चीज थी ही नहीं, इसलिए आर्य समाज से प्रभावित होते हुए भी उसका विधिवत सदस्य होते हुए भी, वे उसके षुद्धी–आन्दोलन कार्यक्रम को न अपना सके। इतना ही नहीं, इस आन्दोलन के विरोध में एक लेख भी लिखा – जिसका हिन्दू समाज में डटकर विरोध हुआ, लेकिन प्रेमचन्द अपनी विचारधारा पर अडिग रहे क्योंकि प्रेमचन्द मानते थे कि ''साम्प्रदायिकता एक पाप है जिसका कोई प्रायष्चित नहीं।'' वे दोनों – हिन्दू और मुसलमान को भारत–माता का पुत्र मानकर उन्हें राश्ट्रीय एकता की दृश्टि से सहोदर मानते थे। उनकी मान्यता थी कि दोनों एक ही राश्ट्र के बासी है, एक ही वातावरण एवं जलवायु में पले हैं। इसलिए जिस किसी एक जाति का लाभ होगा, उससे दूसरों को भी फायदा होगा और साथ ही जिस कार्य से किसी एक जाति की हानि होगी, दूसरे को भी हानि होगी।

हिन्दू मुसलमान की ही भांति हिन्दी–उर्दु का विवाद भी प्रेमचन्द को व्यर्थ का प्रतीत होता था। उन्होंने कहा भी है कि ''उर्दू और हिन्दी में क्यों इतना सौतिया डाह है यह मेरी समझ में नहीं आता। यदि एक समुदाय को उर्दू नाम प्रिय है, तो उन्हें उसका इस्तेमाल करने दीजिये । जिन्हें हिन्दी नाम से प्रेम है, वह हिन्दी कहें – नाम तो पड़ गया हिन्दुस्तान, किन्तु भाशा के लिये अभी झगडा मचा हुआ है।

इसलिए प्रेमचन्द स्कूलों में साहित्य पढ़ाने के विरोधी थे उनका अभिमत है कि ''विजयी जाति पराजितों पर जो सबसे कठोर आघात करती है वह उनके इतिहास को विशैला बना देती है। यह बात हमारे अन्दर ठूंस दी गयी है कि हिन्दू और मुसलमान हमेषा से दो विरोधी दलों में विभाजित रहे हैं हालांकि ऐसा कहना सत्य का गला घोंटना है। उन्होंने अपने 'मनुश्य का अकला' लेख मे स्पश्ट करते हुए लिखा है कि ''हिन्दू और मुसलमान न कभी दूध और चीनी थे न होंगे न होने चाहिए।'' जरूरत सिर्फ इस बात की है कि उनके नेताओं में परस्पर सहिश्णुता और उत्सर्ग की भावना हो। ''जब तक हम पंथजनित संकीर्णता से मुक्त न हो जायेंगे, इस बेड़ी को तोड़कर फेंक न देंगे तब तक देष का उद्धार होना असम्भव है।

प्रेमचन्द – साहित्य में साम्प्रदायिकता की समस्या :
प्रेमचन्द का उपर्युक्त चिन्तन ही उनके साहित्य में चित्रित हुआ है। अब हम उनके साहित्य में व्याख्यापित साम्प्रदायिकता की समस्या पर विचार करेंगें।

नाटक साहित्य में साम्प्रदायिकता की समस्या :
प्रेमचन्द ने हिन्दू–मुस्लिम पागलपन और इनके मध्य बढ़ती खाई को पाटर्न के लिए 'कर्बला' और 'प्रेम की वेदी' नामक नाटक लिखे। 'कर्बला' का युद्ध ऐसी घटना भी है, जिसमें कुछ हिन्दु, हुसैन के साथ लडते–लडते, षहीद हुए थे। ''इस तरह कर्बला एक समान लक्ष्य के लिये धर्म से परे संस्थापित एकता का उदाहरण भी बन जाता है।''

'कर्बला' को पढ़कर कतिपय धर्मान्ध और अदूरदर्षी मुसलमानों ने प्रेमचन्द पर फिकर्ापरस्त होने का इल्जाम लगाया था, हालांकि प्रेमचन्द ने पहले ही से इस बात का ध्यान रखा की मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं को ठेस न पहुंचे।

'प्रेम की वेदी' की जेनी कहती है ''धर्म तो प्रेम का संदेष लेकर आता है और कहता है आदमियों का गला। वह मनुश्य के बीच ऐसी दीवार खड़ी कर देता है जिसे पार नहीं किया जा सकता। आखिर सम्पूर्ण जगत की एक ही आत्मा तो है। धर्म का यह भेद क्या आत्मा की एकता को मिटा सकता है।''

उपन्यास साहित्य में साम्प्रदायिकता :
प्रेमचन्द ने अपने छः उपन्यासों में इसका वर्णन किया है सेवासदन, प्रेमाश्रम कायाकल्प इत्यादि। जैसे सेवासदन में भारतीय राजनीति में तिलक के आगमन से हिन्दू–पुनरूत्थानवादी विचार धारा के प्रवेष और खिलाफत आन्दोलन से जन्मी हिन्दू–मुस्लिम एकता की गूंज मिलती है इस काल में लार्ड मिण्टो ने हिन्दू और मुस्लमानों में फूट डालने की जो नीति अपनाई थी, वह रंग दिखाने लगी थी। 'प्रेमाश्रम' ''भाईयों, मजहब दिल की तरकीब के लिये है। दुनिया कमाने के लिये नहीं, मुल्की हकूक हासिल करने के लिए नहीं। वह आदमी, जो मजहब की आड में मुसलमान है तो काफिर है। हां काफिर है, रूसियाह है। वह सतर पुष्तों से इसी सरजमीन का दाना खा रहे हैं। डफ है उस मुसलमान पर, जो हिजाज और ईराक को अपना वतन कहता है।''

कहानी साहित्य में साम्प्रदायिकता की समस्या :
प्रेमचन्द ने धर्म और सम्प्रदाय से संबंधित दो दर्जन कहानियों की रचना की है। प्रचलन के आधार पर हमें धर्म के दो रूप आन्तरिक और बाह्य देखने को मिलते हैं। विष्व में प्रायः सभी धर्मों के बाह्य रूप में बाह्य चार के साथ कुछ आडम्बर भी होते हैं। इन आडम्बरों में ही, आगे चलकर, कुछ कुप्रथाएं भी आ घुसती है। इसके बाद प्रायः ऐसा होता है कि धर्म का वास्तविक रूप तो पीछे छुट जाता है।

REFERENCES

1. प्रेमचन्द, कुछ विचार, पृ0 95 द्य 2. सरोज प्रसाद, प्रेमचन्द के उपन्यासों में समसामयिक परिस्थितियों का प्रतिफलन, पृ0 311 द्य 3. वही पृ0 311 द्य 4. वही पृ0 311 द्य 5. डॉ0 मदनलाल 'मधु' गोकी और प्रेमचन्द दो अमर प्रतिमाएं पृ0 95 द्य 6. हंसराज 'रहबर', प्रेमचन्द : जीवन, कला और कृतित्व, पृ0 162 द्य 7. प्रेमचन्द, चिट्ठी पत्री, भाग–2, पृ0 71 द्य